

ISSN 2321 - 5704

भाषा भारती

राजभाषा उन्नयन की वार्षिक पत्रिका

अंक 5 - वर्ष 5, मार्च 2018



राजभाषा प्रकोष्ठ
डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय
सागर

ओड़िया से हिन्दी अनुवाद : समस्याएँ और सम्भावनाएँ अजय कुमार पटनायक	86
साहित्यानुवाद : अनुकृति या अनुसृजन छबिल कुमार मेहेर	93
भारत में महिला सशक्तिकरण अनुपमा कौशिक	108
‘पृथ्वी का प्रथम स्नान’ : जीवन की वापसी का आग्रह राजेन्द्र यादव	111
रचनात्मक चिंतन की सूफी ज़मीन आशुतोष	118
हिन्दी में स्त्री-लेखन के मायने हिमांशु यादव	124
निर्मला पुतुल की कवितायें : संवेदना एवं शिल्प अरविन्द कुमार	128 ✓
वर्तमान सिनेमा : सफलता, भाषा और शीर्षक पंकज तिवारी	136
सात कविताएँ पंकज चतुर्वेदी	139
दो कविताएँ दिनेश अत्रि	141
सागर से लौटते समय कुमार कृष्ण	143
तीन कविताएँ नवीन कानगो	145
समाचार अनुराग श्रीवास्तव	149

निर्मला पुतुल की कवितायें : संवेदना एवं शिल्प

— अरविन्द कुमार

“मैं चाहती हूँ/आँख रहते अन्धे आदमी की/ आँखे बने मेरे शब्द /उनकी जुबान बने/जो जुबान रहते गूँगे बने देख रहे हैं तमाशा/चाहती हूँ मैं/नगाड़े की तरह बजे/मेरे शब्द/और निकल पड़े लोग/अपने-अपने घरों से सड़कों पर।”

निर्मला पुतुल आदिवासी लेखिकाओं में वरिष्ठ व अनुभवी लेखिका के रूप में जानी जाती हैं। वे आदिवासी समाज के हक और हकीकत के साथ-साथ उनकी अस्तित्व, संस्कृति, सभ्यता और भाषा की रक्षा करना अपना महत्वपूर्ण कर्तव्य समझती हैं। उनकी कविताओं में अनुभूति की अभिव्यक्ति मिलती है। आदिवासी समाज की संवेदना युक्त कविता दृष्टिगत होती है। शिल्प बेजोड़ है। उनकी अपनी भाषा और अपनी संस्कृति की चिंता है। जिसकी छवि उनकी कविताओं में देखी जा सकती है। साहित्यिक पहल पर आधुनिक समय में विमर्शों का दौर सा चल पड़ा है। उसमें आदिवासी साहित्य भी एक है।

आदिवासी समाज की अपनी एक आदिम सभ्यता, संस्कृति रही है। बावजूद इसके यह समाज हमेशा हाशिये पर रहते घोर संकट के दौर से गुजरता रहा। वर्तमान समय में जहाँ दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, मुस्लिम विमर्श जैसे मुद्दे साहित्य के केन्द्र में बने हुए हैं, वहीं आदिवासी विमर्श भी साहित्य की दुनिया में अपनी अस्मिता स्थापित कर रहा है। दलित व आदिवासी दोनों ही सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। दोनों ही समाज से कटे व धार्मिक पाखण्डों, रूढ़ियों व सामाजिक संरचनाओं के शिकार हैं, किन्तु जब देश आजाद हुआ, तब दलित समाज कुछ हद तक मुख्यधारा में मिल गया, किन्तु आदिवासी समाज मुख्यधारा से कटा रहा और चिन्तन तथा लेखन के एक नये रूप में उपस्थित हुआ। आदिवासी साहित्य अपने अस्तित्व और अस्मिताबोध का साहित्य है। यह साहित्य का ऐसा अध्याय है, जिसमें इस समुदाय की परंपरा, रूढ़ियाँ, संस्कृति, अन्याय, अत्याचार, अपमान, शोषण आदि सभी कुछ का बयान हो रहा है। आज लोककला, संगीत, नृत्य, संस्कृति, भाषा, बोली, लिपि आदि सभी धरातलों पर आदिवासी लेखन एक व्यापक साहित्य का हिस्सा बनता दिख रहा है। यह एक ऐसा जन साहित्य है, जिसमें लक्षित विद्रोह व प्रतिरोध का स्वर जीवन के बुनियादी सरोकार और हकों से महसूस करने वाली पैशाचिक व्यवस्था के विरोध की अभिव्यक्ति है। दलित व स्त्री-विमर्श में